मुस्लिम पुनर्जागरण आंदोलन एवं मुसलमानों में आधुनिक शिक्षा का प्रसार

*ललित कुमार**

भारत में हुआ उन्नीसवीं सदी का धार्मिक-सामाजिक आंदोलन अनेकानेक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था। इसने भारत के राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक पहलुओं को गंभीरता से प्रभावित किया। आधुनिक शिक्षा का प्रसार इस आंदोलन की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता थी। राजा राममोहन राय, महर्षि देवेन्द्रनाथ टैगोर, केशवचन्द्र सेन, रानाडे, दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद सरीखे समाज सुधारकों के प्रयास से हिंदुओं ने आधुनिक शिक्षा को शुरू में ग्रहण करना शुरू कर दिया, किंतु आम मुसलमानों के विरोध के कारण मुस्लिम समाज काफ़ी समय बाद आधुनिक शिक्षा को आत्मसात् करने के लिए तैयार हो सका। भारत में प्राचीन और मध्यकाल में भी शिक्षा थी परंतु उस मध्यकाल शिक्षा का आधार प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन था और वह बहुत कुछ विश्वास पर आधारित था। आधुनिक शिक्षा की सबसे बड़ी देन तार्किक बुद्धि का विकास है। प्राचीन विचारों, सिद्धांतों और परंपराओं को तर्क के आधार पर देखना, भारतीयों ने इस शिक्षा के प्रभाव से आरंभ किया। मुस्लिम समाज के विकास के लिए भी आधुनिक शिक्षा की ज़रूरत को सर सैयद अहमद खाँ, सैयद अहमद, अब्दुल लतीफ़, गुलाम अहमद, मोहम्मद अली, डॉ. ज़ाकिर हुसैन सरीखे लोगों ने महसूस किया और इन महानुभावों के अथक प्रयास के फलस्वरूप आम भारतीय मुसलमान आधुनिक शिक्षा को प्राप्त कर तत्कालीन शासन व्यवस्था एवं सामाजिक परिवर्तन की मुख्यधारा से अपने को जोड़ सका।

भारतीय पुनर्रुद्धार अथवा पुनर्जागरण आंदोलन उन्नीसवीं सदी के भारत की एक महान विशेषता है। पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव से भयभीत भारतीय संस्कृति ने जिस नवीन विचारधारा को जन्म दिया, जिस प्रकार धर्म और समाज में परिवर्तन करने का प्रयास किया और जिस प्रकार भारत के राष्ट्रीय

*सीनियर फैकल्टी मेम्बर, महिला प्रशिक्षण महाविद्यालय, पटना विश्वविद्यालय, पटना, उत्तरी गाँधी मैदान, पटना-80000.

जीवन के सभी क्षेत्रों में एक नवीन चेतना आरंभ हुई, उस चेतना, भावना और उससे प्रभावित विभिन्न प्रयत्नों को हम पुनर्जागरण आंदोलन के नाम से पुकारते हैं। इस राष्ट्रीय आंदोलन ने पश्चिमी संस्कृति से तर्क, समानता और स्वतंत्रता की भावना को प्राप्त करके भारत के प्राचीन गौरव को स्थापित करने का प्रयत्न किया और साथ-ही-साथ प्राचीन भारतीय संस्कृति के दोषों को दूर करते हुए उसे प्रगति के लिए नवीन आधार प्रदान किया। आरंभ में पुनर्जागरण एक बौद्धिक परिवर्तन था, बाद में वह अनेक सामाजिक और धार्मिक सुधारों का आधार बना और अंत में उसने भारत के राजनीतिक आंदोलन को जीवन प्रदान करने में सहयोग दिया। भारतीय जीवन का कोई भी क्षेत्र बाकी न रहा जिस पर इस राष्ट्रीय आंदोलन का प्रभाव नहीं पड़ा। सिन्हा, जगदीश नारायण[1] (1998) ने धार्मिक एवं सामाजिक सुधार आंदोलनों के बारे में ठीक ही लिखा है,

"उन्नीसवीं शताब्दी के धार्मिक एवं सामाजिक सुधार आंदोलन का भारत के इतिहास में विशेष स्थान है। इसके बहुमुखी स्वरूप और व्यापकता की दृष्टि से इस आंदोलन को संघर्षपूर्ण आधुनिक इतिहास में ही एक महत्त्वपूर्ण घटना माना जा सकता है। इस आंदोलन ने भारत की तात्कालिक जड़ता को समाप्त किया और देश के जन-जीवन को झकझोर दिया। इसने जहाँ एक ओर धार्मिक तथा सामाजिक सुधारों का आह्वान किया वहीं दूसरी ओर इसने भारत के अतीत को उजागर कर भारतवासियों के मन में आत्मसम्मान और आत्मगौरव की भावना जगाने की कोशिश की। धार्मिक उपदेशों के साथ-साथ आंदोलन के नेताओं ने स्वतंत्रता और समानता का भी उपदेश दिया। भारत के समसामयिक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में इस स्वतंत्रता का अर्थ मात्र बौद्धिक चिंतन की स्वतंत्रता से ही नहीं, बल्कि असमानता, शोषण और अत्याचार से मुक्ति भी था।"

पुनर्जागरण का प्रभाव भारतीय मुसलमानों पर भी आया, यद्यपि उनके आंदोलनों का सूत्रपात कुछ विलंब से हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में मुस्लिम समाज क्रमिक अवनति तथा ह्रास के चक्र में फँस चुका था। मुसलमानों के मस्तिष्क में निराशा तथा रोष की भावना व्याप्त थी। देश में अपनी दीर्घकालीन राजनैतिक प्रभुता से वंचित हो जाने के कारण, वे नैराश्य तथा पराजय की भावना से भरे हुए थे। उनके आरंभिक आंदोलनों का मुख्य उद्देश्य अँग्रेज़ों को भारत से बाहर निकालकर शासन सत्ता को प्राप्त करना था। उनके आंदोलन धार्मिक कट्टरता पर आधारित थे। वे अंग्रेज़ी की शिक्षा और पश्चिमी संस्कृति के संपर्क के विरोध में थे। देव एवं देव[2] (1989) ने इस विरोध के फलस्वरूप मुसलमानों को हुई हानि की चर्चा करते हुए लिखा है,

''भारतीय मुसलमानों पर पाश्चात्य विचारों और आधुनिक शिक्षा का प्रभाव देर से पड़ा। उन्नीसवीं

[1]सिन्हा, जगदीश नारायण (1998), 'धार्मिक एवं सामाजिक सुधार आंदोलन : कार्यक्षेत्र, स्वरूप और प्रभाव', आधुनिक भारत का इतिहास, संपादक- रामलखन शुक्ल, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, पृष्ठ-342-377.

[2]देव, अर्जुन एवं देव इंदिरा अर्जुन (1989) 'मुस्लिम सुधार-आंदोलन', आधुनिक भारत, कक्षा आठ के लिए इतिहास की पाठ्यपुस्तक, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली, पृ. 149-151.

सदी के पूर्वार्ध में कलकत्ता और दिल्ली के थोड़े से मुसलमानों ने ही अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त की थी। उलेमा (इस्लामी शिक्षा के पंडित) के विरोध के कारण अधिकांश मुसलमान भी ब्रिटिश शासन को फूटी आँखों देखते थे। अँग्रेज़ों ने उलेमा और उच्चवर्गीय मुसलमानों को धीरे-धीरे प्रभावहीन और शक्तिहीन बना दिया था। अंग्रेज़ी शिक्षा और उसके सामाजिक तथा आर्थिक लाभों से वंचित रहने के कारण भारतीय मुसलमानों में लंबे समय तक मध्य वर्ग का उदय नहीं हो सका।''

मुसलमानों द्वारा आधुनिक शिक्षा का बहिष्कार

भारतीय मुसलमान उस समय बहुत पिछड़ी हुई स्थिति में थे और उसका मुख्य कारण था उनका अंग्रेज़ी की शिक्षा और पश्चिमी संस्कृति से अलग रहना। कुमार, ललित[3] (1992) ने आधुनिक शिक्षा की देन पर प्रकाश डालते हुए लिखा है,

''भारत में हिंदू और मुस्लिम काल में भी शिक्षा थी परंतु उस शिक्षा का आधार प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन था और वह बहुत कुछ विश्वास पर आधारित थी। आधुनिक शिक्षा की सबसे बड़ी देन तार्किक बुद्धि का विकास है। भारतीयों ने प्राचीन विचारों, सिद्धांतों और परंपराओं को तर्क के आधार पर देखना, इस शिक्षा के प्रभाव के फलस्वरूप आरंभ किया। क्या अच्छा है और क्या बुरा है, इसका निर्णय विश्वास पर नहीं बल्कि तर्क के आधार पर किया जाने लगा। यही भावना भारतीय पुनर्जागरण आंदोलन को आरंभ करने वाली थी और यही भावना विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक आदि जीवन के सभी क्षेत्रों में परिवर्तन का कारण बनी। यह भावना भारतीयों के बौद्धिक विकास का आधार बनी जिससे उन्नीसवीं तथा बीसवीं सदी के आधुनिक भारत का निर्माण हुआ।''

हिंदू अंग्रेज़ी शिक्षा को प्राप्त करके न केवल अपनी सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक उन्नति कर रहे थे बल्कि सरकारी सेवाओं में स्थान प्राप्त करके शासन में भी भाग ले रहे थे, किंतु मुसलमान इन सभी लाभों से वंचित थे। इस स्थिति में परिवर्तन करने का श्रेय "अलीगढ़-आंदोलन" को है जिसका आरंभ सर सैयद अहमद खाँ ने किया। कुछ लोगों का मानना है कि जो कार्य हिंदुओं के लिए राजा राममोहन राय ने किया, वही कार्य सर सैयद अहमद खाँ ने भारतीय मुसलमानों के लिए किया।

देव एवं देव[4] (1989) ने सर सैयद अहमद खाँ के कार्यों की समीक्षा करते हुए लिखा है,

''मुसलमानों में आधुनिक शिक्षा के प्रसार और सामाजिक सुधार के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण आंदोलन सर सैयद अहमद खाँ ने शुरू किया। .....। धार्मिक और शैक्षणिक सुधारों की समस्या बड़ी कठिन थी। उन्होंने मुसलमानों से इस्लाम की मूल मान्यताओं पर आधारित शुद्धता तथा सरलता से जीवन को अपनाने की अपील की। भारतीय मुसलमानों के पुनरुत्थान के लिए उन्होंने अंग्रेज़ी शिक्षा अपनाने पर जोर

[3]कुमार, ललित (1992), 'आधुनिक शिक्षा का योगदान' दैनिक हिन्दुस्तान, 8 मई.

[4]देव, अर्जुन एवं इंदिरा अर्जुन (1989) - संदर्भ-2 में वर्णित.

दिया। ..... 1864 ई० में उन्होंने अनुवाद समिति की स्थापना की जिसे बाद में वैज्ञानिक समिति का नाम दिया गया। इस समिति का कार्यालय अलीगढ़ में था। इसने विज्ञान तथा अन्य विषयों की अंग्रेज़ी पुस्तकों के उर्दू अनुवाद प्रकाशित किए और समाज सुधार से संबंधित उदार विचारों के प्रसार के लिए एक अंग्रेज़ी-उर्दू पत्रिका भी निकाली। उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि 1875 ई० में अलीगढ़ में "मोहम्मडन एंग्लो-ओरियंटल कॉलेज" की स्थापना थी। आगे चलकर यह कॉलेज भारतीय मुसलमानों का सबसे महत्त्वपूर्ण शिक्षा-संस्थान बन गया।"

जहाँ तक नयी शिक्षा, जो देश में अँग्रेज़ों द्वारा लायी गई थी, के प्रति मुसलमानों के दृष्टिकोण का प्रश्न है, वे इसे तनिक भी पसंद नहीं करते थे। उन्होंने पश्चिम की नयी शिक्षा से अपने को दूर रखने का प्रयत्न किया और अपने मकतबों तथा मदरसों में दी जाने वाली परंपरागत मुस्लिम शिक्षा को अपनी स्वाभाविक दृढ़ता से अपनाए रखा। नयी शिक्षा के प्रति अपनी उदासीनता को उचित बताने के लिए मुसलमानों ने कई कारण प्रस्तुत किए। डब्ल्यू. डब्ल्यू. हन्टर ने उनमें से कुछ का वर्णन इस प्रकार किया है प्रथम, अँग्रेज़ विदेशी भाषाओं द्वारा शिक्षा देते हैं जो एक ऐसी भाषा है जिससे शिक्षित मुसलमान घृणा करते हैं, दूसरा ग्रामीण विद्यालय एक मुसलमानों को ऐसी भाषा सीखने का अवसर नहीं देते जो जीवन में उत्तरदायित्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण करने या अपने धार्मिक कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक है, तीसरे, शिक्षा पद्धति में मुसलमान नवयुवकों के लिए धार्मिक शिक्षा का कोई प्रावधान नहीं है।

अंग्रेज़ी सरकार ने भी अपनी ओर से मुसलमानों को संतुष्ट करने का न तो कोई प्रयास किया और न ही इस संदर्भ में कोई विचार व्यक्त किया। अँग्रेज़ पदाधिकारी मानते थे कि मुसलमान, जिनसे उन्होंने राजनैतिक सत्ता छीन ली है, उनके प्रति रुष्टता का मनोभाव रखते हैं और वे अब भी अपनी पूर्व राजनैतिक प्रभुता को प्राप्त करने का स्वप्न देखते हैं। लार्ड एडिनबरा ने 1843 ई० में कहा था-

"मैं इस धारणा की ओर से अपनी आँखें बंद नहीं कर सकता कि वह जाति (मुसलमान) हमारे प्रति प्रधानत: शत्रुता का भाव रखती है और हमारी वास्तविक नीति हिंदुओं को संतुष्ट करना है।"

1857 ई० के विद्रोह के पश्चात् मुसलमान और अँग्रेज़ों के संबंध और भी बिगड़ गए। इस विद्रोह के परिणामस्वरूप मुसलमानों की शैक्षिक आवश्यकता के प्रति अँग्रेज़ पदाधिकारियों के दृष्टिकोण में और अधिक प्रतिकूल बदलाव आया। उन्होंने मुसलमानों के शैक्षिक दृष्टिकोण एवं मनोभावों को जानने अथवा उन पर विचार करने का कोई प्रयत्न नहीं किया। उन्होंने अंग्रेज़ी शिक्षा को जो संरक्षण प्रदान किया उससे अरबी और फारसी के अध्ययन का, जिसे मुस्लिम शासन में सर्वोपरि स्थान प्राप्त था, महत्त्व और भी कम हो गया। इससे मुसलमानों को विश्वास हो गया कि अँग्रेज़ों की शैक्षिक नीति निश्चय ही उनके विरुद्ध है। अत: वे अंग्रेज़ी स्कूलों से दूर रहे और अपने बच्चों को पुराने मकतबों तथा मदरसों में भेजते रहे।

नयी शिक्षा के प्रति मुसलमानों के दृष्टिकोण में बदलाव

समय के व्यतीत होने के साथ-साथ मुसलमानों

के मस्तिष्क की वह कटुता, जो शासकीय अधिकारियों की उनके प्रति भेद-भाव तथा प्रतिशोधपूर्ण नीति के कारण उत्पन्न हुई थी, घटने लगी। वे इस बात को अधिकाधिक समझने लगे कि नयी शिक्षा से दूर रहने से उन्हीं की हानि हो रही है। नवीन परिस्थितियों के प्रति भारतीय मुसलमानों के दृष्टिकोण में जो यह परिवर्तन हुआ वह उनके प्रगतिशील आंदोलनों से स्पष्ट है। इन आंदोलनों का प्रमुख उद्देश्य मुस्लिम विचारों और संस्कृति को पश्चिम की नयी, उदार तथा विवेकपूर्ण विचारधारा के अनुसार परिवर्त्तित करना था। सिन्हा, जगदीश नारायण[5] (1998) लिखते हैं—

''अठारहवीं शताब्दी की शुरुआत के साथ ही मुगल साम्राज्य पतन के रास्ते पर अग्रसर हो गया था। इस शताब्दी के दौरान मुस्लिम समाज में भी पतन की प्रक्रिया स्पष्ट होने लगी। ऐसी ही परिस्थितियों में रायबरेली के सैयद अहमद ने शेख अहमद सरहिंदी (1562-1624) की तरह ही मुसलमानों की भलाई के वास्ते इस्लाम को बाहरी तत्वों से मुक्त करने का काम शुरू किया। कुरान को अच्छी तरह समझने के लिए उन्होंने फ़ारसी में उसका अनुवाद किया। .... रायबरेली के सैयद अहमद के आंदोलन का सबसे बड़ा परिणाम यह हुआ कि उन्होंने मुसलमानों की बिगड़ती दशा की ओर उनका ध्यान आकृष्ट कर दिया। सैयद अहमद को अपनी कोशिशों में जिनका सहयोग मिला उनमें शाह मोहम्मद और मौलाना अब्दुल हई के नाम उल्लेखनीय हैं।

कई छोटे-छोटे दलों ने मुसलमानों की सामाजिक, राजनीतिक एवं शैक्षिक स्थिति को सुधारने का प्रयास किया। शाह वली उल्लाह के दल का भी मुख्य उद्देश्य भारतीय इस्लाम को बाहरी तत्वों से मुक्त कराना था। पूर्वी भारत में इसके मुख्य नेता करामत अली और हाजी शरीयत उल्लाह थे। वहाबी आंदोलन और कई छोटे-छोटे दलों ने मुसलमानों की सोच में सकारात्मक सुधार की कई कोशिशें की, किंतु मुसलमानों के शैक्षिक सुधार में किए गए सुधारों में सबसे सशक्त रहे अलीगढ़ आंदोलन और जामिया मिल्लिया इस्लामिया आंदोलन। नवाब अब्दुल लतीफ का मुस्लिम साहित्य मुसलमानों में आधुनिक चेतना का संचार कर उदारवादी विचारधारा को जन्म देने में काफी हद तक सफल रहा और फलस्वरूप मुसलमान आधुनिक शिक्षा की तरफ मुखातिब हो सके। जिस प्रकार सर सैयद अहमद ने उन्नीसवीं शताब्दी में मुसलमानों के धार्मिक तथा राजनीतिक चिंतन पर प्रभाव डाला उसी प्रकार बीसवीं शताब्दी में मुहम्मद इकबाल ने भी मुसलमानों की सोच को प्रभावित किया। उन्होंने एक ऐसे सक्रिय और गतिशील दृष्टिकोण अपनाने की अपील की जिससे विश्व को बदला जा सके।

मुस्लिम साहित्यिक समाज एवं आधुनिक शिक्षा का प्रसार

मुसलमानों में आधुनिक चेतना के प्रसार हेतु आरंभिक प्रयास करने का श्रेय नवाब अब्दुल लतीफ को है, जो इस आंदोलन के प्रवर्तक थे। वे एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने भारतीय मुसलमानों

[5]सिन्हा, जगदीश नारायण (1998) - संदर्भ-1 में वर्णित.

की पाश्चात्य संस्कृति तथा शिक्षा से दूर रहने तथा मध्यकालीन विचारों में लिप्त रहने की नीति की भर्त्सना की, क्योंकि उन्हें विश्वास था कि अंग्रेज़ी शासन इतना दृढ़ था कि उसका विरोध नहीं किया जा सकता और वह इतना उपयोगी था कि उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इस विचार को कार्यान्वित करने के लिए नवाब अब्दुल लतीफ ने 1863 ई. में मुस्लिम साहित्यिक समाज की स्थापना की। कलकत्ता के उच्च वर्ग के मुसलमान इसके सदस्य थे और वे इस समाज के सचिव। समाज ने उनके नेतृत्व में यूरोपीय संस्कृति तथा शिक्षा के प्रति बड़ा आदर व्यक्त किया। इसके सदस्य एकत्र होकर सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक विषयों पर आधुनिक, उदार तथा विवेकपूर्ण विचारधारा की दृष्टि से चर्चा करते थे।

यह समाज मुसलमानों द्वारा अंग्रेज़ी भाषा के अध्ययन पर विशेष ज़ोर देता था, क्योंकि इसके बिना वे पश्चिम के साहित्य और विज्ञान से परिचित नहीं हो सकते थे। इस समाज के प्रयत्न व्यर्थ नहीं हुए क्योंकि शीघ्र ही लार्ड हेस्टिंग्स द्वारा स्थापित कलकत्ता मदरसा में अंग्रेज़ी साहित्य और भाषा की पढ़ाई आरंभ कर दी गई। बंगाल में मुसलमानों के लिए जो अन्य नये कॉलेज खोले गए उनमें भी इसी नीति का अनुसरण किया गया। अंग्रेज़ी भाषा के प्रति मुसलमानों की सोच के संदर्भ में सिंह, आर०पी०[6] (2005) ने लिखा है कि प्रारंभ में मुसलमानों ने अंग्रेज़ी शिक्षा के महत्त्व को नहीं समझा और इसके अध्ययन का विरोध भी किया। बाद में अंग्रेज़ी की शिक्षा के प्रति भारतीयों द्वारा इस तरह प्रयास किया गया कि कंपनी की सहायता से चलने वाली संस्थाओं में अंग्रेज़ी भाषा के माध्यम से शिक्षा देने की अनिवार्यता के लिए किए जेम्स मिल, चार्ल्स ग्रांट या फिर मैकाले के प्रयास की कोई ज़रुरत ही नहीं थी।

अहमदिया आंदोलन तथा मुसलमानों की नयी शिक्षा

यह आंदोलन जो मिर्जा गुलाम अहमद द्वारा 1889 ई० में आरंभ किया गया था, आधुनिक विचारधारा तथा आदर्शों से प्रेरित था। इसका मुख्य उद्देश्य ऐसे सुधारों को कार्यान्वित करके, जो पश्चिम की उदारवादी विचारधारा के अनुकूल हों, मुस्लिम समाज में पुनर्जागरण उत्पन्न करना था। यह आंदोलन मुसलमानों के लिए उसी उद्देश्य की पूर्ति करना चाहता था जो ब्रह्मसमाज ने हिंदुओं के लिए किया था। इस आंदोलन के संस्थापक ने इस बात का अनुभव किया कि हिंदुओं ने पाश्चात्य उदारवाद और शिक्षा को अपनाकर बुद्धिमानी का कार्य किया है। उनका विचार था कि मुसलमानों को भी ऐसा ही करना चाहिए। अपनी धार्मिक विचारधारा में भी इस आंदोलन ने ब्रह्मसमाज की ही भाँति पर्याप्त व्यापकता दिखाई, क्योंकि यह भी पूरी मानव जाति के लिए जाति, वर्ण और धर्म के भेदभाव के बिना एक सार्वभौमिक धर्म में विश्वास करता था। ये सब बातें मुस्लिम समाज की पुरानी रूढ़िवादी तथा संकीर्ण सांप्रदायिक विचारधारा से बिलकुल भिन्न थीं।

[6]सिंह, आर. पी. (2005), 'लैंग्वेज पौलिसी ड्यूरिंग कंपनी रूल', इंडियन एजुकेशनल रिव्यू, वॉल्यूम-41, नवंबर-2, जुलाई, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली, पृ. 3-33.

मुस्लिम समाज में वांछित सांस्कृतिक पुनर्जागरण लाने के लिए इस आंदोलन ने मुसलमानों के बीच नयी शिक्षा के प्रसार का समर्थन किया। अत: इसने बहुत सी शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना करना प्रारंभ किया जिनमें पुरानी मुस्लिम भाषाओं — अरबी और फ़ारसी — और उनके साहित्य के अध्ययन के अतिरिक्त अंग्रेज़ी भाषा और पाश्चात्य विज्ञानों के अध्ययन पर पर्याप्त ज़ोर दिया जाता था।

सशक्त शैक्षिक, सामाजिक एवं सुधारवादी आंदोलन — अलीगढ़ आंदोलन

जहाँ तक मुसलमानों में आधुनिक चेतना के प्रसार का प्रश्न है, अलीगढ़ आंदोलन, जो भारतीय मुसलमानों के सबसे बड़े नेताओं में से एक सर सैयद अहमद खाँ के द्वारा चलाया गया था, निश्चय ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण आंदोलन था। मुसलमानों और सरकार के बीच वांछित पुनर्मेल स्थापित करने के लिए सर सैयद अहमद खाँ ने एक शक्तिशाली आंदोलन प्रारंभ किया। इसके लिए, उन्होंने एक ओर तो शासकों को मुसलमानों की स्वामिभक्ति का विश्वास दिलाने की कोशिश की और दूसरी ओर अँग्रेज़ों के प्रति वफ़ादार रहने से होने वाले लाभों से मुसलमानों को परिचित कराने का प्रयत्न किया। मुसलमानों की उन्नति के लिए सर सैयद अहमद खाँ ने दो मुख्य लक्ष्य निर्धारित किए - (1) अंग्रेज़ी सरकार और मुसलमानों के संबंध को ठीक करना, और (2) मुसलमानों में आधुनिक शिक्षा का प्रचार करना।

अँग्रेज़ों और मुसलमानों के संबंध को ठीक करने का प्रयत्न सर सैयद अहमद खाँ ने बहुत ही उपयुक्त अवसर पर आरंभ किया था। हिंदू पश्चिमी संस्कृति से प्रभावित होकर न केवल योग्य बनते जा रहे थे बल्कि राजनीतिक भावनाओं की भी प्रगति कर रहे थे जो कि अँग्रेज़ों की दृष्टि से क्रांतिकारी और अँग्रेज़ों के विरुद्ध होती जा रही थी। इस कारण, अँग्रेज़ों ने भी मुसलमानों की वफादारी को प्राप्त करने की कोशिश की क्योंकि मुसलमानों में कोई प्रभावशाली राजनीतिक प्रगति उस समय तक नहीं हुई थी और मुसलमानों का प्रयोग हिंदुओं की बढ़ती हुई राष्ट्रीयता की भावना के विरुद्ध किया जा सकता था।

सर सैयद अहमद खाँ अपने दूसरे उद्देश्य से उदासीन न थे। उन्होंने मुसलमानों की शिक्षा और सामाजिक प्रगति के लिए भी निरंतर प्रयत्न किया और इसके लिए वे मुसलमानों को अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा देना आवश्यक मानते थे। उन्होंने बताया कि कुरान में ऐसी कोई बात नहीं है जो मुसलमानों को अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त करने या पश्चिमी संस्कृति के संपर्क में आने से रोके। अपने उद्देश्य के प्रचार, प्रसार तथा पूर्ति के लिए 1864 ई० में उन्होंने गाज़ीपुर में, अपने भारतीय तथा यूरोपीय मित्रों की सहायता से, एक अनुवाद समाज स्थापित किया। मुसलमानों को अपनी मातृभाषा द्वारा पाश्चात्य कलाएँ तथा विज्ञान सीखने में इस समाज ने, अंग्रेज़ी में लिखी हुई इतिहास, अर्थशास्त्र, विज्ञान और अन्य विषयों की बहुत सारी पुस्तकों का उर्दू में अनुवाद करके बड़ी सहायता दी। बाद में इसे 'अलीगढ़ का वैज्ञानिक समाज' के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। इस समाज ने अंग्रेज़ी पुस्तकों का उर्दू में अनुवाद करने के साथ-साथ उर्दू और अंग्रेज़ी में एक पत्रिका को भी आरंभ किया जिसका उद्देश्य मुसलमानों में सामाजिक सुधार करना था।

1869 ई. में सैयद अहमद खाँ इंग्लैंड गए और उन्हें स्वयं पश्चिमी संस्कृति के संपर्क में आने का अवसर मिला। 1870 ई. में वह भारत वापस आ गए और तब से उन्होंने अंग्रेज़ी की शिक्षा का प्रचार और भी अधिक उत्साह से आरंभ किया। 1875 ई० में उन्होंने ऐंग्लो-ओरियण्टल कॉलेज की स्थापना की और यहीं कॉलेज आगे चलकर मुस्लिम विश्वविद्यालय में परिवर्त्तित हुआ। इस कॉलेज ने मुसलमानों के आधुनिकीकरण में उसी प्रकार भाग लिया जिस प्रकार हिंदुओं के आधुनिकीकरण में कलकत्ता के हिंदू कॉलेज ने भाग लिया था। इस कॉलेज में कला और विज्ञान की शिक्षा का प्रबंध पश्चिमी शिक्षा-पद्धति के आधार पर किया गया और इसने नौजवान मुसलमानों को उदार शिक्षा और प्रगतिशील विचारों के निर्माण में बहुत सहायता प्रदान की। सर सैयद अहमद खाँ ने मुसलमानों में आधुनिक विचारों को फैलाने के लिए एक 'मुस्लिम शिक्षा सभा' की स्थापना भी की और अनेक ऐसे व्यक्तियों को अपने चारों तरफ एकत्र किया जो उनके विचारों को फैलाने के लिए प्रयत्नशील बनें। जिस लगन के साथ सर सैयद अहमद ने अपना शैक्षिक कार्य प्रारंभ किया, उसका सरकारी पदाधिकारियों पर बड़ा प्रभाव पड़ा और तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड लारेंस ने उन्हें एक स्वर्ण-पदक द्वारा विभूषित किया और लार्ड मैकॉले की पुस्तकों का एक पूरा संकलन उन्हें प्रदान किया। इससे सर सैयद अहमद खाँ की ख्याति बहुत बढ़ गई और मुस्लिम शिक्षा के क्षेत्र में एक अग्रणीय नेता के रूप में उनके प्रभाव में पर्याप्त वृद्धि हुई। सर सैयद अहमद खाँ ने इस मत का भी प्रचार किया कि इस्लाम धर्म की मान्यताएँ विक्टोरियन धार्मिक और सामाजिक मान्यताओं की विरोधी नहीं हैं और इसलिए मुसलमान लोग पाश्चात्य शिक्षा और संस्कृति को अपनी परंपरागत मान्यताओं और जीवन पद्धति को किसी प्रकार की हानि पहुँचाए बिना ग्रहण कर सकते हैं।

मुस्लिम शिक्षा, समाज सुधार और जागृति के लिए जो कार्य सर सैयद अहमद खाँ ने किया, वह उस समय तक किसी भी भारतीय मुसलमान ने नहीं किया था। उन्होंने मुस्लिम समाज और धर्म में सुधार करके उन्हें आधुनिक परिस्थितियों के अनुकूल बनाने का प्रयत्न किया और उन्होंने ही प्रभावशाली ढंग से सर्वप्रथम मुसलमानों को यह बतलाने का साहस किया कि अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा और पश्चिमी सभ्यता के संपर्क में आए बिना उनकी प्रगति संभव नहीं है। इन विचारों को मुस्लिम समाज में फैलाने में उन्हें रूढ़िवादी मुसलमानों के कट्टर विरोध का सामना करना पड़ा किंतु उन्होंने इस कार्य को किया और इसमें सफलता पाई। सर सैयद अहमद के प्रयास की सराहना करते हुए चन्द्र, विपीन[7](1996) लिखते हैं,

''सैयद अहमद खान का विश्वास था कि मुसलमानों का धार्मिक और सामाजिक जीवन आधुनिक, पाश्चात्य, वैज्ञानिक ज्ञान और संस्कृति को अपनाकर ही सुधर सकता है । इसलिए आधुनिक शिक्षा का प्रचार जीवन-पर्यन्त उनका प्रथम ध्येय रहा। एक अधिकारी के रूप में उन्होंने अनेक नगरों में विद्यालय स्थापित किए

[7]चन्द्र, विपीन (1996), **'नये भारत का उदय'**, आधुनिक भारत, कक्षा 12 के लिए पाठ्यपुस्तक, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली, पृ. 151-165.

थे और पश्चिमी ग्रंथों का उर्दू में अनुवाद कराया था।''

जामिया मिल्लिया इस्लामिया के रूप में आधुनिक राष्ट्रीय शिक्षा का उदय

बीसवीं शताब्दी के द्वितीय दशक में भारतीय मुसलमानों में राष्ट्रीय भावना का उदय होना एक महत्त्वपूर्ण घटना थी, क्योंकि इसने उनका संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक दृष्टिकोण ही बदल दिया और उनकी भावी प्रगति पर गहरा प्रभाव डाला। शीघ्र ही उनकी राजनैतिक राष्ट्रीयता एक सर्वव्यापी तत्त्व बन गई जिसमें शिक्षा का क्षेत्र भी सम्मिलित था । सर सैयद अहमद खाँ द्वारा स्थापित अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के अंग्रेज़ी दृष्टिकोण के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया आरंभ हो गई । यह मुसलमानों की उस राष्ट्रवादी इच्छा का स्वाभाविक परिणाम था जिसके अनुसार वे अपनी शिक्षा को विदेशी प्रभाव से मुक्त करके, अपने हाथों में रखना चाहते थे।

शिक्षा के क्षेत्र में भारतीय मुसलमानों की महत्त्वाकाँक्षा अपनी चरम सीमा को तब पहुँची जब असहयोग आंदोलन के जोश में राष्ट्रवादी मुसलमान मोहम्मद अली के नेतृत्व में खिलाफ़त आंदोलन चला रहे थे, इस आंदोलन के अंर्तगत मुस्लिम छात्र शासकीय विद्यालयों से अलग हो गए। सरकार द्वारा नियंत्रित तथा सहायता-प्राप्त विद्यालयों से अलग होकर विद्यार्थियों और अध्यापकों ने अपना असहयोग व्यक्त किया और साथ ही उन्होंने अक्तूबर 1920 ई. में कुछ तम्बुओं के नीचे एक प्रतिद्वंदी संस्था की स्थापना की जिसका नाम जामिया मिल्लिया इस्लामिया रखा गया और जिसके प्रथम आचार्य मोहम्मद अली हुए।

जामिया मिल्लिया, जिसकी स्थापना प्रगाढ़ राष्ट्रीयता के असीम स्वप्नों तथा उत्साहपूर्ण विचारों के दिनों में हुई, भारतीय मुसलमानों की सर्वोच्च शैक्षिक आकाँक्षाओं का प्रतीक है। यह शिक्षा को विदेशी प्रभाव से स्वतंत्र रखकर अपने हाथों में रखने की उनकी इच्छा का स्पष्ट प्रमाण है। मुसलमानों के मस्तिष्क को संकीर्ण सांप्रदायिकता के घेरे से निकालकर राष्ट्रीयता के विस्तृत तथा प्रगतिशील पथ पर अग्रसर करने का यह उनका अंतिम और कदाचित् सर्वोत्तम प्रयास था।

आरंभ में जामिया को काफी कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। जामिया के लिए वह समय सबसे अधिक कठिन था जब खिलाफ़त और असहयोग आंदोलन के उत्साह की लहर, जिसकी पृष्ठभूमि में इसका जन्म हुआ, मंद पड़ गई। 'सीधी कार्यवाही' को 1922 ई. में समाप्त कर देने के पश्चात् राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं के मस्तिष्क में निराशा और पराजय की भावना व्याप्त हो गई थी, यहाँ तक कि कुछ लोगों ने इस संस्था को बंद करने का भी विचार व्यक्त किया। कुछ अध्यापकों ने चुपचाप अन्य काम खोज लिए और बहुत से छात्रों ने इसे छोड़कर दूसरे संस्थानों में प्रवेश ले लिया। ऐसी विपरीत परिस्थितियों में जामिया ने अपने को किसी भाँति जीवित रखा, क्योंकि भविष्य में इसे शिक्षा और संस्कृति का एक महान राष्ट्रीय केंद्र बनना था। 1952 ई. में इसे दिल्ली स्थानान्तरित कर दिया गया और तब से इसके इतिहास में एक नवीन अध्याय प्रारंभ हुआ। प्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री डॉ. जाकिर हुसैन का जामिया अधिक ऋणी है। उन्होंने

प्राचार्य के रूप में इस संस्था की बड़ी सेवा की और उन्हीं के मार्गदर्शन में यहाँ बुनियादी शिक्षा की महान योजना पर प्रयोग किया गया, जो आगे चलकर हमारी राष्ट्रीय शिक्षा की आधारशिला बनी।

उपसंहार

भारतीय पुनरुद्धार आंदोलन की एक इकाई के रूप में मुस्लिम राष्ट्रीय आंदोलन ने तत्कालीन भारतीय समाज को सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक तथा शैक्षिक क्षेत्र में गंभीरता से प्रभावित किया। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और जामिया मिल्लिया इस्लामिया जैसी सशक्त, बहुआयामी और प्रभावशाली शिक्षा संस्थानों के अतिरिक्त कई अन्य देशी संस्थाओं की स्थापना भी इस महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान हुई। तार्किक दृष्टिकोण का विकास, धर्म-सुधार, अच्छे साहित्य का निर्माण तथा विभिन्न भाषाओं के साहित्य का विकास, अनुसंधान तथा वैज्ञानिक भावना का विकास, औद्योगीकरण की भावना का विकास, ललित कलाओं की उत्पत्ति, मध्यम वर्ग की उत्पत्ति, भारत की राष्ट्रीयता का निर्माण और राजनैतिक आंदोलन का आरंभ, विदेशी तथा पश्चिमी विद्वानों से संपर्क तथा समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ तथा छापाखानों की स्थापना जैसी कई महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों का श्रेय इस आंदोलन को जाता है और इन उपलब्धियों से प्रभावित होकर तथा इन उपलब्धियों पर अपना प्रभाव छोड़ती हुई शिक्षा अपना स्वरूप राष्ट्रीय, सामाजिक तथा धार्मिक ज़रूरतों के अनुसार निर्धारित कर सकने का प्रयास करती रही और बहुत हद तक कर सकी ।

सिन्हा जगदीश नारायण[8] (1998) ने मुस्लिम राष्ट्रीय आंदोलन के साथ-साथ अन्य आंदोलनों के बारे में लिखा है,

"चूंकि ये सभी आंदोलन मुख्य रूप से 'उदारवादी' थे अतः पश्चिम के उदारवादी तत्वों से इनका विरोध नहीं था। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के भारत में स्थायित्व के लिए यह स्थिति लाभदायक थी। अतः अँग्रेज़ों ने इन सुधारों एवं सुधारकों का अपने हित में उपयोग किया। आंदोलनों के परिणामस्वरूप अंग्रेज़ी शिक्षा और पश्चिमी विचारों का भारत में काफी प्रसार हुआ। इस काम में अँग्रेज़ों ने अंग्रेज़ी प्रशासकों, पश्चिमी विद्वानों तथा ईसाई पादरियों के अलावा भारतीय सुधारकों के सहयोग एवं समर्थन का भी उपयोग किया।

..... सुधार आंदोलन की शायद सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि इसने भारतीयों को समानता, स्वतंत्रता एवं जागरण का संदेश एक ऐसे समय पर दिया जब देश गुलामी की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था और समस्त जन-जीवन अंधविश्वास, रूढ़िवादिता एवं अज्ञान के अंधकार में भटक रहा था।"

अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा एवं आधुनिक शिक्षा का प्रसार अँग्रेज़ों की प्रारंभिक शैक्षिक नीति का हिस्सा नहीं था। वे अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त ऐसे लोगों की तलाश में थे जिनकी मदद से वे राज-काज चला सकें और जो स्वतंत्रता की बात न करके उनके इशारे पर उनके हित के लिए काम करते रहें। यदि पुनर्जागरण के माध्यम से विभिन्न सामाजिक संगठन अपने-अपने धर्मों के लोगों

[8]सिन्हा, जगदीश नारायण (1998), संदर्भ-1 में वर्णित.

को आधुनिक शिक्षा देने का प्रयास नहीं करते तो शायद भारत में अंग्रेज़ी एवं विज्ञान की शिक्षा का प्रसार इतनी तेजी से नहीं हो पाता। अंग्रेज़ी शिक्षा देने या न देने की अँग्रेज़ों की असमंजस की स्थिति की चर्चा लाल, सुन्दर[9] 1982। कुछ इस प्रकार करते हैं,

"सन् 1757 से लेकर 1854 तक करीब 100 साल के अनुभव और सलाह मशविरे के बाद इंग्लिस्तान के नीतिज्ञों को इस बात का विश्वास हुआ कि थोड़े से भारतवासियों को अंग्रेजी शिक्षा देना इस देश में अंग्रेजी साम्राज्य को कायम रखने के लिए आवश्यक है। किंतु इस पर भी ये लोग इतने बड़े प्रयोग के लिए एकाएक साहस न कर सके। ट्रेवेलियन ने अपने लेख और बयान, दोनों से उन्हें साफ आगह कर दिया था कि अशिक्षित या अंग्रेज़ी शिक्षा से वंचित भारतवासियों के दिलों में अपनी पराधीनता के विरुद्ध गहरा असंतोष भीतर ही भीतर भड़कता रहता था, जिसका विदेशी शासकों को पता तक नहीं चल सकता था।"

[9]लाल, सुन्दर (1982), 'भारतीय शिक्षा का सर्वनाश', भारत में अंग्रेज़ी राज (द्वितीय खंड), प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली, पृ. 682-703.